इकाई 22

संजातीयता की अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

22.1 प्रस्तावना

22.2 वर्ग और संजातीयता

22.3 संजातीयता का निर्माण

22.4 प्रारंभिक दृष्टिकोण

22.5 उपकरणात्मक दृष्टिकोण

22.6 संजातीयता का निर्माणात्मक प्रारूप

22.7 संजातीयता का जेनकिन प्रारूप

22.8 प्रजाति और संजातीयता

22.9 सारांश

22.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

अधिगम उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- वर्ग और संजाति का वर्णन कर सकेंगे;
- संजाति के निर्माण को बता सकेंगे;
- संजातीयता के प्रारूप, यांत्रिक प्रारूप तथा निर्माणवादी प्रारूप का रेखाचित खींच सकेंगे; तथा
- प्रजाति और संजाति में संबंध का वर्णन कर सकेंगे।

22.1 प्रस्तावना

'भिन्न होना' एक ऐसी सोच है जिसे हम सबने अपने भीतर कहीं न कहीं अंतर्मन में बैठा लिया है। हम भिन्न होना सीखते हैं क्योंकि हमें सामाजीकरण के प्रारंभिक चरणों में निरंतर यह बताया जाता है कि विभेदीकरण एक प्राकृतिक प्रक्रिया है। बार-बार यह जताना कि लड़के, लड़के होते हैं और लड़किंयाँ, लड़कियाँ होती हैं, से लिंग भेद की भावना और हम और उनके संदर्भ में 'स्व' की चेतना मन में बैठ जाती है। जब व्यक्ति जीवन चक्र की विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरता है तो 'हम' और 'उन' की श्रेणियों के निर्माण का अर्थ भिन्न हो जाता है। 'उन' के विरुद्ध 'हम' के निर्माण में सांस्कृतिक विषयवस्तु भी जोड़ दी जाती है। ये पुनर्रचनाएं प्रायः पूर्वाग्रह और रूढ़िवादिता की स्वैच्छिक स्वीकृति से ग्रसित हो जाती हैं। इन निरन्तर व्यवहारिक प्रतिरूपों की मान्यता और उनसे उभरे परिणाम संजातीयता के विचार को सामाजिक सिद्धांत बनाने में सहायक होते हैं।

संजातीयता शब्द को प्राचीन ग्रीक शब्द ethnos से लिया गया है जिसका अर्थ ऐसी स्थितियों से है जहाँ मानव समूह एक साथ रहते और काम करते हैं। (Cf. Ostergard, 1992)।

आजकल इस विचार का अनुवाद प्रायः 'लोग' अथवा 'राष्ट्र' के रूप में किया जाता है (जेनकिन 1997)। समकालीन समाजशास्त्र और लोक चर्चित अवधारणा में इस शब्द का प्रयोग अभी नया-नया है। 1941 में प्रकाशित 'यान्की सिटी सीरीज' के साथ इस शब्द का प्रचलन सामान्य अमरीकी प्रयोग से लोकप्रिय हुआ। डब्ल्यू. लायड वार्नर एवं पाल एस. लुन्ट द्वारा लिखित दो पुस्तकों 'द सोशल लाइफ आफ ए माडर्न सिटी 1941' तथा 'द स्टेटस सिस्टम आफ ए मॉड्रर्न कम्युनिटी' ने इस अवधारणा में निहित विभिन्न विरोधाभासों तथा अस्पष्टता को उजागर किया। वार्नर एक ऐसी संज्ञा की तलाश में था जो आयु, लिंग, धर्म और वर्ग (सोलोर्स, 1981) के समानार्थी हो तथा जब उसे ग्रीक संज्ञा 'इथोनस' का ज्ञान हुआ जिसे राष्ट्र, लोगों एवं अन्यों के संदर्भ में प्रयुक्त किया जाता था तो वार्नर ने संजातीय शब्द का प्रयोग ऐसे गुण के रूप में किया जो व्यक्तियों को एक वर्ग से अलग करता है और दूसरे वर्ग से जोड़ता है (उपर्युक्त 1981)। दूसरे विश्व युद्ध के बाद अमरीकी पहचान की खोज के लिए किए गए अनेक अध्ययनों से अमरीका में संजातीयता अमरीकी पहचान बनाम अल्पसंख्यक पहचान अथवा प्रवासी पहचान की खोज बन गई। इसी प्रवृत्ति को फिलिप गलीसन ने अपने लेखों 'अमेरिकन्स ऑलः एथनिसिटी, आइडियोलॉजी' तथा अमरीकी संजातीय समूहों के हार्वर्ड एनसाइक्लोपीडिया 'द्वितीय विश्व युद्ध के युग में अमरीकी पहचान' में लिखा है।

युद्ध के बाद के वर्षों में तेज हुए, 'विस्तृत अमरीकी अध्ययन आंदोलन के एक भाग के रूप में, संजाति को एक आदर्श अमरीकी मूरत के रूप में समझा गया। इस कारण नहीं कि उनकी अलग सांस्कृतिक विरासत थी अपितु बिल्कुल उससे विपरीत कारण से कि संजातीयता ने अपने आप को एक चारित्रिक ढाँचे में अधिकतम स्तर तक प्रस्तुत किया और यह ढाँचा अमरीका की परिवर्तन, गतिशीलता और अतीत से संपर्क कटने से उपजा था।' यह कथन आस्कर हैंडलिन (1951) ने गलीसन्स के विश्लेषण के बाद अपनी पुस्तक 'द अपरूटेड' की प्रस्तावना में इतने सुंदर क्रमबद्ध ढंग से लिखा है कि इसके परिणामस्वरूप उसने फिर लिखा कि 'एक बार मैंने अमरीका में प्रवासियों का इतिहास लिखने के विषय में सोचा तो ज्ञात हुआ कि प्रवासी ही अमरीका का इतिहास हैं।

संजातीयता पर हुए अनेक अध्ययनों की चाहे कितनी ही कमियां रहीं हों, पर एक संयुक्त तथ्य उभर कर आता है कि संजातीयता का अध्ययन दूसरों के संदर्भ में किया जाता है और इसका केंद्र बाह्य (अस्वैच्छिक, वस्तुनिष्ठ) और आंतरिक (स्वैच्छिक और व्यक्तिनिष्ठ) होता है। समाजशास्त्र के साहित्य में संजातीयता को प्रायः वर्ग और आधुनिकता के अर्थ में ले लिया जाता है।

22.2 वर्ग और संजातीयता

मार्क्स के पदानुक्रम के कथन में निहित वर्ग की अवधारणा और सामाजिक विभेदीकरण के नियम अपने क्षेत्र में 'वर्ग चेतना' को सम्मिलित करते हैं — यह ऐसा नियम है जो समूहों के बीच एकता के बीच पर चर्चा करता है। एक सामाजिक रचना के रूप में संजातीयता भी बंधनों और एकत्रित होने के विचार से विकसित हुई है। वर्ग का सिद्धांत देने वाले विचारक दूसरों द्वारा किए जाने वाले शोषण को 'वर्ग एकता' को मजबूत करने का साधन मानते हैं। इसी प्रकार संजातियों की रचना में सहयोग करने वाले संजातीय चेतना को विकसित करने के लिए संयुक्त अनुभवों पर ध्यान देते हैं। इन संयुक्त और समान लक्षणों के बावजूद अनेक समाजशास्त्री और समाजविज्ञानी यह तर्क देते हैं कि संजाति वर्ग नहीं है। ठीक उसी समय उनमें से कोई भी संजातीयता और वर्ग के बीच महत्वपूर्ण संबंधों से इंकार नहीं करता। डेनियम बेल (1975) ने अपने प्रसिद्ध लेख 'एथनिसिटी एंड सोशल चेंज — (संजातीयता और सामाजिक परिवर्तन') में लिखा है —

'वर्ग भावना में कमी एक ऐसा कारक है जिसे संजातीय पहचान के अभ्युदय के साथ जोड़ा जाता है। वह आगे कहता है कि संजातीयता और अधिक महत्वपूर्ण हो गई है क्योंकि यह हितों को प्रभावशाली बंधनों के साथ जोड़ सकती है। जब अन्य सामाजिक भूमिकाएं अधिक निरपेक्ष और अवैयक्तिक हो जाती हैं तो संजातीयता पहचान के कुछ मूर्त बिंदु देती है जैसे — भाषा, भोजन, संगीत और नाम।

इस विषय पर लोकप्रिय लेख लिखने वालों में से एक ग्लेजर और मोयनियन ने अपने लेख 'बियोंड द मेल्टिंग पॉट्स' में इसी प्रकार के विचार दिए हैं। वे अपने 1975 के प्रकाशन 'एथनिसिटीः थ्योरी एंड एक्सपीरेंस' में लिखते हैं —

वर्ग आधारित सामाजिक पहचान के रूप और आज भी चल रहे संघर्ष के सामने संजाति आधारित सामाजिक पहचान के रूप और संघर्ष को जीवित देख कर हम चकित हैं। अन्य कहीं अपने एक विचारपरक लेख 'एटलांटिक मंथली, अगस्त 1968' में वे तर्क देते हैं कि हमारे पूंजीवाद, समाजवाद और साम्यवाद के मुद्दों पर समकालीन व्यवस्तता हमें यह देखने से वंचित करती है कि इस समय की यहाँ और विदेशों में बेचैनी और गड़बड़ी का हमारी संजातीय, प्रजातीय और धार्मिक सम्बद्धता से अन्य मुद्दों की तुलना में अधिक संबंध है।

संजातीय शब्द का राजनीतिक महत्व पूर्व सोवियत संघ एवं युगोस्लाविया जैसे देशों के विघटन एवं 11 सितम्बर को विश्व व्यापार केंद्र पर बम्ब गिराने की घटनाओं के बाद विशेष रूप से बढ़ गया। नृ-विज्ञानियों और समाजशास्त्रियों के लेखन में इस शब्द का आम प्रयोग 1970 के प्रारंभिक वर्षों में शुरू हुआ। यहां यह रोचक बात है कि नृ-विज्ञान और समाजशास्त्र की 1970 की पाठ्य पुस्तकों से पहले शायद ही इस शब्द को परिभाषित किया गया था। बीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों के साहित्य में 'संजातीय समूहों' का कही-कहीं उल्लेख मिलता है।

बॉक्स 22.1: संजातीयता पर पुनर्विचार

रिचर्ड जेनकिन्स अपने बहुप्रशंसित कृति (पुस्तक) 'रिथिंकिंग एथनिसिटीः अरग्यूमेंट्स एंड एक्सप्लोरेशन — संजातीयता पर पुनर्विचारः तर्क और अन्वेषण' में लिखते हैं —

इस शताब्दी के प्रारंभिक दशकों में संजातीयता और संजातीय वर्गों से जुड़ी अवधारणाओं को शैक्षणिक एवं अन्य कई दिशाओं में ले जाया गया (स्टोन, 1996)। इसका वर्णन दैनिक चर्चाओं और भाषणों में होने लगा और यूरोप तथा उत्तरी अमरीका के सांस्कृतिक विभिन्नता वाले लोकतंत्र देशों में यह समूह विभेदीकरण और उपयोग की राजनीति का केंद्र बन गए। 1945 से प्रजाति के प्रति जनता की धारणाओं और वैज्ञानिकों के तिरस्कार के बीच एक खाली स्थान को भरने के लिए संजातीयता ने स्वयं को प्रस्तुत किया और यह शीत युद्ध के बाद के पुनर्गठन का एक सशक्त माध्यम बन गई। 'संजातीय शुद्धिकरण' की बुराई, प्रजातीय स्वास्थ्य तथा अंतिम समाधान की प्रारंभिक मीठी बातों के साथ खड़ी है (1997 : 9)।

जेनकिन्स द्वारा सजातीयता के रोचक विश्लेषण से जो दो बातें उभरकर आती हैं। पहली तो यह कि 'संजातीयता' और 'संजातीय समूह' का विचार साथ-साथ चलता है । यदि संजातीयता का उदय सत्तर के दशक के प्रारंभ में एक महत्वपूर्ण सामाजिक एवं राजनीतिक सिद्धांत के रूप में हुआ तो इसका प्रचलन इससे भी पूर्व एक सामाजिक वास्तविकता के रूप में था जिससे सामाजिक और सांस्कृतिक समूहों के बीच समानताओं और विषमताओं को चिह्नित किया जाता था। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह थी कि 'संजातीय समूह' का नाम प्रजाति की धारणा की बुराई और प्रचलन के प्राकृतिक और निरपेक्ष विकल्प के रूप में उभरकर आया। जेनकिन उन लाभों का भी वर्णन करता है जो संजातीय सम्बद्धता के कारण प्राप्त होते हैं। कभी-कभी यह लाभ समूहों को प्रदान किए

जाते हैं क्योंकि समाजों में उन्हें दूसरे समूहों की तुलना में हाशिए पर माना जाता है। आप शायद सुरक्षात्मक भेदभाव अथवा आरक्षण से परिचित हैं जिन्हें उत्तरी अमरीका में प्रजातीय दृष्टि से विभिन्न (कम सुविधा प्राप्त) समूहों के हक में सकारात्मक कदम कहा जाता है। यहां यह समझना जरूरी है कि एक संजातीय समूह का अंग होने से अपनेपन और अलग पहचान के साथ कई लाभ और हानियां जुड़ी हुई हैं। हम इनमें से कुछ मुद्दों की अगले अध्यायों 'विशिष्टता (पहचान) का निर्माण तथा सीमा तथा सीमा निर्वाह' में चर्चा करेंगे। हम आवश्यक रूप से 'संजातीयता के सैद्धांतीकरण' — इसके ऐतिहासिक मूल और विभिन्न विचारकों द्वारा इसके अवलम्ब के लिए प्रस्तुत किए गए सिद्धांतों पर केंद्रित रहेंगे।

22.3 संजातीयता का निर्माण

संजातीयता के सिद्धांत में योगदान देने वाले कुछ विचारक संजातीय का उद्‌गम मैक्स वेबर के प्रारंभिक लेखों से बताते हैं। वेबर ने अपने एक महत्वपूर्ण योगदान, जिसका नाम है — 'एकोनॉमी एंड सोसायटी — (अर्थव्यवस्था और समाज') जिसका प्रथम प्रकाशन 1922 में हुआ और 1968 में पुनर्प्रकाशन हुआ, में लिखा है कि एक संजातीय समूह वह समूह होता है जिसके सदस्यों का यह संयुक्त विश्वास होता है कि उनके पूर्वज एक ही हैं अथवा उसे यूं कहा जा सकता है कि वह किसी एक ही की संतान हैं। वह अपने कथन को सिद्ध करने के लिए लिखता है कि —

'संजातीय सदस्यता से समूह निर्माण नहीं होता, अपितु यह केवल किसी समूह निर्माण में सहायक होती है, विशेषतः राजनीतिक क्षेत्र में। दूसरी ओर प्राथमिक रूप से राजनीतिक समुदाय ही, भले ही वह किसी प्रकार से गठित हो, संयुक्त संजातीयता को प्रेरित करता है (1968 : 389)।

वेबर के कथन से स्पष्ट है कि अपनेपन की भावना को पैदा करने में जीव विज्ञान की बहुत कम भूमिका है। वेबर ने संजातीय समूह की कल्पना एक 'प्रतिष्ठा समूह' के रूप में की है। एक हैसियत समूह की जड़ें सांझी, भाषा, धर्म और संस्कृति में हो सकती हैं। सांझी सामुदायिकता के आधार पर सदस्य एक ध्रुवीय सामाजिक घेरा बनाने का प्रयत्न करते हैं अर्थात वे दूसरों को अपने विशिष्ट क्षेत्र में घुसने की अनुमति नहीं देते। प्रत्येक सदस्य जानता है कि सामूहिक भागीदारी की स्थिति में उससे क्या अपेक्षा की जाती है। वे एक दूसरे के सम्मान और गरिमा की रक्षा के लिए मिल-जुलकर काम करते हैं। इसी धारणा के अनुरूप ही राजनीतिक संघर्षों में आत्मघाती दस्ते काम करते हैं। वेबर का यह भी विचार है कि क्योंकि सजातीयता से जुड़ी संयुक्त कार्रवाई की संभावनाएं अनिश्चित हैं, और इसके निकट संबंधी 'देश' को सामाजिक उद्देश्यों के लिए ठीक से परिभाषित नहीं किया जा सकता। (विस्तृत विवरण के लिए जेनकिन्स 1997 - 10 को देखें)। वेबर द्वारा स्पष्ट इस कथन के माध्यम से हम यह समझ सकते हैं कि एक शासन के अंतर्गत राजनीतिक संप्रभुता के लिए संघर्ष करने वाले समूह द्वारा किए गए विनाश कार्यों को किस प्रकार उस समूह द्वारा देशभक्ति और वीरतापूर्ण कार्य समझा जाता है जबकि शासक वर्ग द्वारा उसी कार्य की धोखे और छल के रूप में निन्दा की जाती है। आप इजरायल और फिलिस्तीनियों और इसी प्रकार के अन्य विद्रोही गुटों और राष्ट्रों के बीच में चल रहे संघर्षों के विषय में अखबारों में जरूर पढ़ रहे होंगे।

संजातीयता जटिल समीकरण बनाती है और साधारण संस्कृति तथा मानवीय स्पष्टीकरण इसके रहस्यों को खोलने के लिए पर्याप्त नहीं है। सामाजिक व्यवहार और राजीनीतिक गठन के जटिल प्रश्नों को समझने के लिए 'संजातीयता' एक सैद्धांतिक हथियार के रूप में न केवल समाजशास्त्रियों के लिए रुचि का विषय है अपितु राजनीतिक विज्ञानियों और मानवशास्त्रियों के लिए भी उतनी ही रुचि का विषय है। विस्तृत रूप से संजातीयता को

समझने के तीन दृष्टिकोणों पर विचार किया जा सकता है, जिनके नाम हैं : i) प्रारंभिक, ii) यंत्रवादी (उपकरणीय) और iii) निर्माणवादी।

22.4 प्रारंभिक दृष्टिकोण

प्रारंभिक दृष्टिकोण संजातीयता पहचान के लिए जीव विज्ञान को एक आधारभूत कारक मानता है। जैविक जड़ों को अनुवांशिक और भौगोलिक कारकों के आधार पर निश्चित किया जाता है। ये संबंध निकटता से जुड़े समूहों का निर्माण करते हैं। अपने रिश्तेदारों के प्रति वफादारी की आवश्यकता होती है ताकि संसाधनों को नियंत्रित और अधिकृत करने वाली स्थिति में बैठे लोग अपने निकट रिश्तेदारों की तरफदारी करें। आज की भाषा में इस प्रकार की तरफदारी की भाई-भतीजावाद कह कर निन्दा की जाती है। भाई-भतीजावाद का अर्थ है दूसरों की तुलना में अपनों की तरफदारी करने की प्रवृत्ति। लोकतंत्र और गुण एवं प्रतिभा के सिद्धांत का दावा करने वाले समाजों में सामाजिक और जैविक आधार पर अपनों को चुनने के सिद्धांत को नहीं माना जाता । पियर वैन डेन बर्घे (Pier Van den Berghe) इसको इस प्रकार स्पष्ट करता है —

"आमतौर पर प्राकृतिक रूप से रिश्तों को चुनने के बोधगम्य ढंग को संजातीयता कहते हैं, जो एक स्वभावगत प्राचीन प्रवृत्ति है। तथा जो आज के आधुनिक औद्योगिक समाजों में भी चल रही है (1981 - 35)।

संजातीयता के सामाजिक-जीव वैज्ञानिक विश्लेषण यह मानते हैं कि संजातीयता को समझाने और समझने के लिए कुछ मूर्त स्पष्टीकरण हैं। इस विचारधारा के कुछ समर्थक यह मानते है कि आनुवंशिक संबंध अपने आप में ही संजातीय बंधनों के लिए उत्तरदायी हैं। इसी विचारधारा का दूसरा समूह यह सोचता है कि जैविक संबंध और अपनेपन की भावना स्वतः विकसित होती है जिसे सांस्कृतिक प्रभाव मजबूत करते हैं। विभिन्न विचारकों और विद्वानों द्वारा प्रस्तुत वर्णनों से यह प्रतीत होता है कि इस विचारधारा की जड़ें मानव समाज के क्रमिक विकास निर्माण मैं जमी हैं। शा एवं वांग की मान्यता है कि प्रारंभ में मानव विकास के एक अंग के रूप में किसी समूह से सम्बद्धता को आनुवंशिकी के आधार पर समझा जाता था, जब जीवित रहने के लिए किसी को अपने परिवार के सदस्यों को पहचानने की योग्यता आवश्यक थी।

बॉक्स 22.2: संजाति समूह का सिद्धांत

रूस और सोवियत के मानव विज्ञान में प्रारंभवादी विचारधारा का समर्थन और उल्लेख कई बार मिलता है। रूसी विद्वानों की कृतियों में संजाति समूह के सिद्धांत को, जिसे बाद में वाई.यू. ब्रोमले (1974) ने विकसित किया, इस प्रकार परिभाषित किया गया है —

"संजाति समूह लोगों का वह समूह है जो एक ही भाषा बोलते हैं, एक ही उद्‌गम को स्वीकार करते है, परम्पराओं द्वारा सुरक्षित एवं पावन किए गए रीति-रिवाजों और जीवन शैली को जीते हैं और जिसके आधार पर उन्हें अन्य लोगों से अलग पहचाना जा सकता है।

संजातीयता की सामाजिक-जीव वैज्ञानिक व्याख्या करने वाले संजाति समूह की उत्पत्ति के अध्ययन के लिए कोई ढाँचा विकसित करने के आलोचक थे। संजाति समूह की उत्पत्ति के सिद्धांत के अनुसार संजाति समूहों का जन्म ब्रह्माण्डीय ऊर्जा एवं भूमि के संयुक्त प्रभाव से हुआ। संजातीयता के अध्ययन के प्रारंभिक (प्राचीन) प्रारूप के प्रति विभिन्न प्रतिक्रियाएं हुईं। संजातीयता का साधारण सामाजिक-जीव वैज्ञानिक आधार पर वर्णन, जो संजातीय समूह को रिश्तेदारों के समूह का विस्तार मानता है, की कई विद्वानों ने कटु

आलोचना की है, परंतु क्लिकफोर्ड ग्रीट्ज जैसे विद्वानों के लेखों में प्रशंसा और समर्थन प्राप्त हुआ है। ग्रीट्ज का मत है कि खून, भाषा और संस्कृति के रिश्ते आवश्यक और प्रशंसातीत दिखाई देते हैं जो प्राकृतिक प्रतीत होते हैं और समाज के सदस्य होने के नाते आप में से अधिकांश ने इन्हें स्वयं अनुभव भी किया होगा।

संजातीयता को समझने के लिए आवश्यक प्रश्न यह है कि वफादारी की अपेक्षा करने वाली अनुभव की स्थितियों के संदर्भ में किस प्रकार ये भावनाएं तर्कसंगत ठहरती हैं। प्रारंभवादी विचारधारा का तर्क है कि अपनेपन के रिश्ते और सांस्कृतिक जुड़ाव हमेशा सर्वोच्च रहेंगे और सामाजिक तथा राजनीतिक गतिविधियों का संचालन करेंगे। ग्रीट्स अपने इस तर्क को इस लेखन के माध्यम से और विस्तार देता है —

'इससे प्रारंभवादियों की भावनाओं और नागरिक भावनाओं में सीधा टकराव पैदा होता है। किसी अन्य समूह से संबंध न रखने की इच्छा से कबीलावाद, संकीर्णतावाद और सम्प्रदायवाद जैसी अनेक समस्याएं पैदा होती हैं जो अन्य अनेक समस्याओं से अधिक भयानक और सर्वत्र व्याप्त होती हैं तथा नये राज्यों के समक्ष गंभीर और उग्र समस्याओं के रूप में प्रस्तुत होती हैं (1973 - 261)।

आज के आधुनिक नागरिक समाज के निर्माण में यह चर्चा सर्वोपरि है जिसमें समानता को एक वैध सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया जाता है। संस्कृति, भाषा, धम और उद्‌गम के आधार पर भेद और अंतर को स्वीकार किया जाता है परंतु इन प्राथमिक लक्षणों और गुणों के आधार पर एक राष्ट्र-राज्य में अलग राजनीतिक पहचान को स्थापित करना अच्छा नहीं माना जाता। संजातीयता का अध्ययन करने वाले छात्र निरंतर इस चर्चा में व्यस्त रहते हैं कि संजातीयता प्राचीन है अथवा राजनीतिक इरादों के चलते लोगों ने इसका अनर्थ किया है।

22.5 उपकरणात्मक दृष्टिकोण

संजातीयता (नृ-विज्ञान) के छात्र निरंतर पूछते हैं —

'क्या संजातीयता मनुष्य स्वभाव का एक पहलू है? अथवा क्या इसे किसी भी हद तक परिस्थितियों के अनुसार, रणनीति बनाकर चालाकी से परिभाषित किया जाता है और व्यक्तिगत स्तर तथा सामूहिक स्तर पर बदला जा सकता है? क्या इसका संपूर्ण निर्माण सामाजिक ढंग से होता है? (जेंकिन्स 1997)।

हम पहले प्रश्न पर पहले ही विचार कर चुके हैं और आपको बता चुके हैं कि किस प्रकार विचारक और विद्वान मानव स्वभाव का एक अंग होने के नाते संजातीयता के मामले में अलग-अलग बात कहते हैं। अब हम दूसरे प्रश्न पर चर्चा करेंगे और संजातीयता के संबंध में यंत्रवादी दृष्टिकोण का भी वर्णन करेंगे। समाजशास्त्र और राजनीति विज्ञान के लेखों में यंत्रवादी दृष्टिकोण साठ के दशक के बाद के वर्षों और सत्तर के दशक के प्रारंभिक वर्षों में लोकप्रिय हुआ। समाजशास्त्र के साहित्य में यांत्रिकतावादी उपकरणात्मक दृष्टिकोण को लोकप्रिय बनाने में फ्रेड्रिक बार्थ और पाल ब्रास का नाम प्रायः लिया जाता है। और कभी-कभी परिस्थितिवादी परिप्रेक्ष्य बताते हुए संजातीय समूह की सीमाएं बनाए रखने पर बल दिया जाता है। इसका मत है कि मनुष्य एक संजातीय समूह से दूसरे संजातीय समूह में जा सकता है। यह परिवर्तन या तो परिस्थितियों के कारण हो सकता है अथवा राजनीतिक अभिजात्य वर्ग की जोड़-तोड़ के कारण हो सकता है।

सांस्कृतिक आभिजात्य वर्ग द्वारा लाभ और शक्ति की होड़ में किए गए जोड़-तोड़ और रचना के फलस्वरूप राजनीतिक कपोल कथाओं से उत्पन्न संजातीय समूहों के सांस्कृतिक रूप, मूल्य और रीति-रिवाज राजनीतिक सता और आर्थिक लाभ की प्रतिस्पर्धा में उनके

लिए संसाधन बन जाते हैं। वे समूह के सदस्यों की पहचान के प्रतीक और द्योतक बन जाते हैं, जिनका प्रयोग राजनीतिक विशिष्टता के निर्माण की सुविधा के लिए किया जाता है।

ब्रास ने अपनी दो पुस्तकों —'उत्तर भारत में भाषा, धर्म और राजनीति' तथा 'संजातीयता और राष्ट्रवादः सिद्धांत और तुलना 1991 (Ethnicity and Nationalism: Theory and Comparison") में भारत के संदर्भ में संजातीयता और राष्ट्रवाद के मुद्दों का बारीकी से परीक्षण किया है। ब्रास ने संजातीयता की परिभाषा डे-वास से उधार ली है जिसके अनुसार दूसरे समूहों से अलग दिखाई देने के लिए संस्कृति के किसी एक पहलू का एक समूह द्वारा व्यक्तिपरक, प्रतीकात्मक एवं विशिष्ट प्रयोग करना ....। ब्रास ने इसमें कुछ शब्द जोड़कर नया रूप दिया। ब्रास ने अंतिम पंक्ति को यूं बदला —'आंतरिक निकटता बढ़ाने और दूसरों से अलग दिखाई देने के लिए' ..... (1991)। इस वर्णन से ब्रास प्रतीकों के महत्व पर बल देता है और संजातीयता के फलने-फूलने के लिए आंतरिक निकटता की आवश्यकता भी बताता है। जब हम अनुभव के संदर्भ में इन दावों का परीक्षण करते हैं तब समझ सकते हैं कि राजनीतिक दल किस कारण विभिन्न समूहों से जुड़े प्रतीकों को निरंतर खोजते रहते हैं। जिससे राजनीतिक पुनर्गठबंधन की स्थिति में उस समूह की निष्ठा प्राप्त की जा सके। गौहत्या, मुस्लिम पर्सनल ला, उर्दू भाषा का घटता महत्व जैसे कुछ प्रतीकात्मक मुद्दे हैं जिन्हें राजनीतिक बहस में आमतौर पर उठाया जाता है।

दूसरी ओर फ्रेडरिक ब्राथ हमेशा आश्वस्त था कि संजातीयता के अन्वेषण (खोज) के लिए समूह को परिभाषित करने वाली संजाति सीमा रेखा को केंद्र में रखना चाहिए जो इस परिभाषा को स्वीकारती है कि संजातीयता, सांस्कृतिक विभिन्नता वाला सामाजिक समूह है। बार्थ अपनी विचारगोष्ठी "संजातीयता समूह और सीमाएं" में संबंध आरोपण और स्व-आरोपण को समूह की सीमाएं निर्धारित करने की प्रक्रिया के लिए अत्यंत दोषपूर्ण मानता है।

बॉक्स 22.3: संजातीय समूह का समष्टि प्रारूप (कार्पोरेट मॉडल)

एक संजातीय समूह जैविक आधार पर निरंतर स्वयं को बढ़ाने वाला होता है तथा समूह के सदस्यों के मूल सांस्कृतिक मूल्य समान होते हैं और ये मूल्य प्रत्यक्ष सांस्कृतिक मूल्यों में दिखाई देते हैं, तीसरे ऐसा समूह आपसी व्यवहार और संचार का आबद्ध सामाजिक क्षेत्र होता है, चौथे इसके सदस्य अपने आप को उस समूह से संबद्ध दर्शाते हैं और दूसरे भी उन्हें उस समूह के सदस्य के रूप में पहचानते हैं।

बार्थ ने समष्टि प्रारूप की आलोचना करते हुए लिखा है कि संजातीय समूह की इस प्रकार की व्याख्या से लगता है कि समाज में अनेक समूह एक-दूसरे से अलग रहते हैं, जैसे अपने आप में एक द्वीप हों। अपनी व्याख्या और विश्लेषण में वह संजातीय समूहों को विचार के आधार पर जुड़े लोगों का बढ़ने वाला लचीला समूह बताता है। उसका कहना है कि संजातीय पहचान और सामाजिक व्यवहार में इसके निर्माण और पुनःनिर्माण को सामाजिक वास्तविकता का समस्यामूलक पक्ष मानना चाहिए। उसका सुझाव था कि नृजातीय वर्णनकारों को ऐसी स्थितियों में जहाँ संजातीयता और संजाति सीमाकरण सामाजिक आधार पर किया और चलाया जाता है, वहाँ रीति-रिवाजों और प्रक्रियाओं का परीक्षण अवश्य करना चाहिए। इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए बार्थ इस बात पर बल देता है कि इस प्रकार का निर्माण तभी संभव है जब हम यह मानते हैं कि संजातीय समूह, संबंध आरोपण तथा लोगों द्वारा स्वयं पहचान करने की श्रेणियां हैं। बार्थ अपने संजातीय प्रारूप में निम्नलिखित विशेषताओं पर प्रकाश डालता है — संजातीयता का विश्लेषण सामाजिक व्यक्ति की परिस्थिति को समझने के साथ शुरू होता है। सामाजिक व्यक्तियों को संघर्ष और सहयोग की स्थिति में अपनी पहचान निर्धारित करने को कहा जा रहा है। संजातीय पहचान प्राप्त होने वाले रूप का निर्धारण इसी विचार के आधार पर किया जाता है।

दूसरे, संजातीय सीमाओं को बनाए रखना ध्यान का केंद्र बन जाता है। यदि यह संघर्ष की स्थिति हो तो संजातीयता केन्द्रीय स्थान में आ जाती है। यह अपने आपको ऐसी स्थिति में अधिक प्रखर रूप से अभिव्यक्त करती है। इसकी तुलना में यह निरपेक्ष स्थिति में या आर्थिक अथवा राजनीतिक सहयोग चाहने वाली स्थिति में अपने आपको और अपने अंतर को दबे रूप में व्यक्त करती है। हमारे और उनके बीच की सीमाओं के पार के अंतरव्यवहार को रणनीतिक स्थिति द्वारा परिभाषित किया जाता है।

अभ्यास 22.1

बार्थ के संजातीय प्रारूप की विशेषताओं को रेखांकित कीजिए।

तीसरा इन मानकों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानक विचारणीय संजातीय समूह के सदस्यों तथा उससे बाहर के सदस्यों द्वारा संबंध आरोपण की धारणा है। इस संबंध आरोपण के मानक के कारण संजातीयता राजनीतिक रूप में प्रभावशाली हो जाती है। ऐसी स्थिति में जब एक व्यक्ति अपने आपको किसी समूह का सदस्य मानता है परंतु दूसरे नहीं मानते तब उसके इस अपनेपन की भावना का बहुत कम अथवा कोई प्रभाव नहीं होता।

चौथा, संजातीयता निश्चित और स्थिर नहीं है अपितु यह स्थितियों के आधार पर परिभाषित की जाती है। इसके रोचक उदाहरण स्थानांतरण के परे की स्थितियों में देखने को मिलती है जब व्यक्ति स्वयं को विभिन्न संजातीय समूहों से संबद्ध बता सकता है अथवा उनसे अपनेपन की भावना को भिन्न-भिन्न अंशों में दिखा सकता है अर्थात स्थिति के अनुरूप बढ़ा-चढ़ाकर अथवा घटाकर प्रदर्शित कर सकता है।

पाँचवां, परिस्थिति विज्ञान के मुद्दे विशेष रूप से संजातीय पहचान निर्धारित करने के लिए प्रभावकारी हैं। यदि आर्थिक कर्म निर्माणात्मक हो और संसाधन सीमित हो तो यह देखा गया है कि ऐसी स्थितियों में संजातीयता अधिक मुखर हो जाती है।

संजातीयता पर बार्थ के विचारों पर टिप्पणी करते हुए जेंकिन्स लिखता है —

बार्थ इस बात पर बल देता है कि संजातीय पहचान निर्णय लेने वाले रणनीतिकारों के बीच अंतरव्यवहार और आचरण से बनती, स्थापित होती अथवा परिवर्तित होती है। 'संजातीय समूह और सीमाएं' में संजातीयता कुछ और होने से पहले शायद राजनीति, निर्णय निर्माण और लक्ष्यपरक सांझी संस्कृति की विषयवस्तु है। इस प्रारूप में सीमाओं के भीतर तथा इसको बनाए रखने की प्रक्रियाओं से उपजी संजातीयता का दूसरों की तुलना में अलग होने से आंतरिक समानता का चित्र प्रस्तुत होता है।

समाजशास्त्री और सामाजिक नृ-विज्ञानी यह मत दे चुके हैं कि संजातीयता का यह प्रारूप अवश्य ही मैक्स वेबर की कृतियों से उधार लिया गया है। बार्थ ने इसको प्रजाति और संस्कृति से अलग करके आसान बनाया है। वरम्यूलिन और ग्रोवर के अनुसार 'बार्थ ने संजातीयता को संस्कृति के पक्ष के रूप में नहीं अपितु सामाजिक संगठन के एक पक्ष के रूप में प्रस्तुत किया है।

वालमैन (1968) ने बार्थ के विचारों को आगे बढ़ाया और कहा —

'संजातीयता एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा उनके अंतर को 'हम' की भावना को संगठन और पहचान के उद्देश्य से बढ़ाने के लिए प्रयोग किया जाता है क्योंकि इसके लिए दो की आवश्यकता होती है । इसलिए संजातीयता केवल 'हम' की सीमा पर घटित होती है जब यह या तो 'उनके' साथ संपर्क में, या संघर्ष अथवा विरोध या उनसे विपरीत होती है इसलिए 'हम' और 'उनके' बीच की सीमा भी बदलती है। न केवल सीमा ही बदलती है अपितु इसको चिह्नित करने वाले मानक भी बदलते हैं।

इस व्याख्या से स्पष्ट है कि संजातीयता व्यवहार में संचालित होती है । इसलिए यह अवश्य ही स्थायी नहीं है और इस अर्थ में इसका जैविक विरासत से कुछ लेना-देना नहीं है। यही विशेषता संजातीयता के यंत्रवादी दृष्टिकोण को प्रारंभिक दृष्टिकोण से अलग करती है। संजातीय पहचान बदल रही है। यह हमेशा दोतरफा होती है। हमारा हिन्दु अथवा मुसलामन होना, गुजराती अथवा तेलगु होना निरर्थक है यदि यह पहचान परिस्थितियों से बंधी हुई न हो। इन अंतर्व्यवहारों में मुख्य मुद्दा इनके निर्माण के कल्पित महत्वपूर्ण अंतरों में तोड़-मोड़ करना है।

एबनर कोहेन (Abner Cohen) (1974) बार्थ के योगदान का विश्लेषण करते हुए बार्थ की संजातीय अवधारणा से सहमत नहीं था। हैन्डलमैन (Handleman) का विश्वास था कि संजातीयता का सांस्कृतिक पक्ष सामाजिक संगठन का महत्वपूर्ण पक्ष है। संजातीयता को सामाजिक और सांस्कृतिक पक्षों के बीच बांटना गुमराह करना है। इससे आगे वह कहता है कि संजातीयता सामाजिक रूप से गठित होती है अथवा सामूहिकता के विभिन्न अंशों में समाविष्ट होती है जिस पर इसका महत्व और व्यक्तिगत अनुभव का महत्व निर्भर करता है। अनिश्चित से निगम की ओर बढ़ते हुए हैंडल मैन संजातीय समुच्चय संजातीय श्रेणी, संजातीय ढाँचा, संजातीय संगठन और संजातीय समुदाय में भेद करता है। उदाहरण के लिए, संजातीय समानता, संजातीय समूहों को स्थानीय स्तर पर महत्वपूर्ण सामाजिक रूप बताए बिना, दैनिक जीवन को व्यवस्थित कर सकती है (जेंकिन्स 1977 - 20)।

22.6 संजातीयता का निर्माणात्मक प्रारूप

संजातीयता का निर्माणात्मक प्रारूप उत्तर आधुनिकता पर आधारित व्याख्यात्मक माडल में पाया जाता है। इस व्याख्या में समूह सीमाओं और विशिष्टता से अधिक अनेक विषयों पर बल दिया गया है । सोकोलावस्की और शखोव (Sokolovski and Tishkou) इस बात पर बल देते हैं कि संजातीयता के बनने और बनाए रखने की प्रक्रियाओं में वस्तुपरक और व्यक्तिपरकता के बीच विवाद के प्रति नई संवेदनशीलता के वातावरण में बार्थ द्वारा बल दी गई संजातीय सीमाओं का चर्चा योग्य संजातीय चरित्र भी उसके वस्तुपरकतावादी पूर्वजों के रूप ग्रहण करने की प्रवृत्ति की याद दिलाने वाला था। ऐसा कहा गया कि 'समूह' 'सीमा' जैसे शब्द एक निश्चित पहचान को प्रतिध्वनित करते हैं और बार्थ की इसको बनाए रखने की चिंता इसको और अधिक रूप देने का प्रयास करती है (कोहेन, 1978 - 386)। संजातीयता की पारे जैसी प्रकृति पर तब ध्यान दिया गया जब इसको सामाजिक-सांस्कृतिक संकेतकों के समुच्चय (शारीरिक रूप, नाम, भाषा, इतिहास, धर्म, राष्ट्रीयता) के रूप में परिभाषित किया गया जो सदस्यों और गैर-सदस्यों की संयुक्त पहचान को सम्मिलित होने और विलग होने के बंटवारे को पालने वाली क्रियाओं के आधार पर परिभाषित करता है — (कोहेन 1978 - 386 - 7)।

22.7 संजातीयता का जेनकिन प्रारूप

जेंकिन्स ने संजातीयता का एक आधारभूत सामाजिक नृ-विज्ञानी प्रारूप प्रस्तुत किया है जो समाजपरक समझ के लिए भी उपयोगी है। प्रारूप को निम्नलिखित ढंग से संक्षेप में व्यक्त किया गया है —

- संजातीयता सांस्कृतिक विभेदीकरण से संबंधित है — सामाजिक पहचान के उद्देश्य पर बल देती है (जेंकिन्स 1996)। पहचान सदैव समानता और असमानता के बीच विवाद है।
- संजातीयता मुख्य रूप से संयुक्त संस्कृति के अर्थ से संबंधित है, लेकन इसकी जड़ें सामाजिक व्यवहार में है और अधिकांशतः यह सामाजिक व्यवहार का ही परिणाम है।

- संजातीयता अब उस संस्कृति अथवा स्थितियों की तुलना में जड़ अथवा अपरिवर्तनशील नहीं है जिसका यह एक अवयव है अथवा जिन स्थितियों से यह उपजी है।
- संजातीयता एक सामाजिक पहचान के रूप में सामूहिक और वैयक्तिक है, सामाजिक अंतर्व्यवहार में बाह्यकृत और व्यक्तिगत पहचान में अन्तस्थ (जिंकिन्स 1997 : 13 - 14)

जेंकिन्स संस्कृति और संजातीयता को रूप देने की हमारी प्रवृत्ति की प्रति सावधान करता है। हमारे लिए यह याद रखना जरूरी है कि संजातीयता अथवा संस्कृति कोई ऐसी चीज नहीं है जो लोगों के पास होती है अथवा जो लोगों से संबंध रखती है अपितु यह तो एक जटिल नाट्यशाला है जिसे लोग अपने दैनिक जीवन में अनुभव करते हैं, प्रयोग करते हैं, सीखते हैं और लागू करते हैं और इसी के बीच वे अपने प्रति एक भावना का निर्माण करते हैं और अपने साथियों के प्रति समझ बनाते हैं (1997 : 14)।

जेंकिन्स संजातीयता पर विचारकों की आधुनिक धारा का प्रतिनिधित्व करता है जो रचनात्मकवादी स्थिति को स्वीकार करते हैं।

उपरोक्त परिभाषित अवधारणा का मूल सामाजिक निर्माण और दैनिक व्यवहार पर बल देता है तथा यह परिवर्तन और स्थिरता को स्वीकार करते हुए हमें अनुभव के आधार पर वैयक्तिकता को पहचानने और संस्कृति एवं सामूहिक पहचान में भागीदारी की छूट देता है (जेंकिन्स 1997 : 165)। संजातीयता के इस पुनर्निर्माण का विचार है कि संजातीयता न तो विरासत में मिलती है और न पूर्णतः तोड़ी-मरोड़ी जाती है जैसा कि यंत्रवादी और प्राचीनवादी विचारकों का मत था।

बॉक्स 22.4: संजातीयता की कठोरता

संजातीयता की कठोरता, स्थिरता एवं दृढ़ता की अपनी सीमाएं हैं जो संजातीयता की अनुमति समझ विकसित करने का आधार हैं जो हमें यह जानने और समझने देती है कि यद्यपि इसकी कल्पना की जाती है परंतु यह कल्पित नहीं है तथा इसकी प्राचीनता और आधुनिकता को स्वीकार करने की अनुमति देती है। पुनर्विचार से यह निष्कर्ष निकलता है कि हमें संजातीय संबंधों की प्रामाणिकता के प्रति एक संतुलित विचार बनाना चाहिए। भावनात्मक आवेग और अत्यधिक दुर्भावना के बीच, न ही बिल्कुल प्रारंभिक और न ही पूरी तरह हेरा-फेरी योग्य, अपितु संजातीयता और इसके अन्य रूप- संस्कृति और इतिहास, तथा कभी न मिटने वाली समानताओं और असमानताओं पर आधारित संजातीयता सामूहिक पहचान एवं सामाजिक संगठन की सिद्धांत है अपने आप में न तो यह तो अच्छी और न ही बुरी चीज़ है। कदाचित यह अति मानवीय है। इसके बिना सामाजिक दुनियां की कल्पना करना कठिन है। (जेंकिन्स 1997)।

22.8 प्रजाति और संजातीयता

संजातीयता और प्रजाति के बीच जटिल संबंध है। प्रजाति शब्द को लेटिन भाषा के शब्दों और स्पैनिश एवं कैस्टीलियन शब्दों से लिया गया है जिनके विभिन्न अर्थ हैं — जैसी पीढ़ी, जड़ अथवा मूल, खून की विशेषता, खराब कपड़े की थेगली, कलंक अथवा खराब, या घोड़ों को पालना (सोलोर्स 1996)। प्रजाति शब्द का प्रयोग संजातीयता शब्द के प्रचलन के बहुत पहले से ही किया जा रहा था। प्रजाति शब्द वैज्ञानिक-शैक्षणिक क्षेत्र में श्रेणीबद्ध करने की विशेषता के रूप में प्रचलित था। शारीरिक नृ-विज्ञानियों ने मानव के प्रकारों को श्रेणीबद्ध करने के लिए शारीरिक विशेषताओं का प्रयोग किया। यद्यपि मनुष्य की अपने साथियों पर विजय प्राप्त कर उन्हें आधीन बनाने की प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप इन तथाकथित श्रेणीबद्ध करने वाले अध्ययनों का भरपूर दुरुपयोग हुआ जिससे वैज्ञानिक अन्वेषण का मार्ग प्रशस्त हुआ।

मैगनस हैर्शफेल्ड (Magnus Hirshfeld) ने 1938 में प्रजाति की बुराई को प्रजातिवाद कहा। द्वितीय विश्व युद्ध में प्रजातियों की शुद्धता को बचाने के नाम पर हुए नरसंहार से शिक्षाविदों और राजनीतिज्ञों को जनता के सामने इन शब्दों का प्रयोग करने में संकोच होने लगा। पचास के दशक के मध्य में प्रयुक्त समूह की अवधारणा मानव समूहों को प्रजातीय गुणों के आधार पर श्रेणीबद्ध करने के बजाय सांस्कृतिक असमानताओं और अंतरों के आधार पर श्रेणीबद्ध करने की एक निरपेक्ष व्यवस्था प्रदान करने का प्रयास था। यह तर्क दिया गया कि संजातीय समूह की शब्दावली एक मूल्य निरपेक्ष संरचना प्रदान करेगी तथा लोगों को अधिश्रेणिक एवं भेदभावपूर्ण श्रेणियों में वर्गीकृत करने के पूर्वाग्रह एवं रूढ़िवादी तरीकों से बचाएगी। कई विद्वान इस विशेषता की उपयोगिता से आश्वस्त थे परंतु अन्य कई विद्वानों का विचार था कि विशेषता में शायद ही कोई लाभ हो क्योंकि प्रजाति ही केवल ऐसा साधन है जिससे संजातीय अंतरों को वैधता मिलती है और संजातीय सीमाओं को चिह्नित किया जाता है (वालमैन - 1986)। इस प्रकार की विशिष्टता और भेद को मानने वाले लेखकों का वंशानुक्रम एवं संघर्षपूर्ण होना आवश्यक नहीं, वहीं प्रजातीय संबंध में ऐसा प्रतीत होना सुनिश्चित है (जेंकिन्स 1998 : 75)।

अभ्यास 22.2

प्रजातीय एवं संजातीयता के बीच संबंधों का वर्णन कीजिए और उनके बीच तुलना कीजिए।

कोई भी यह तर्क दे सकता है कि प्रायः प्रजाति को शारीरिक और दिखाई देने वाले अंतरों के आधार पर निर्मित एवं ग्रहण किया जाता है, परंतु इस धारणा के साथ जुड़े पूर्वाग्रहों एवं रूढ़ियों को सामाजिक स्तर पर ही समझा एवं व्यक्त किया जाता है। इस अर्थ में कई लोग प्रजाति को संजातीयता का ही रूप मानेंगे। जेंकिन्स इस विषय पर अलग ढंग से तर्क देते हैं कि संजातीयता और प्रजाति दो अलग अवधारणाएं हैं और वे एक सही युग्म नहीं हैं। अधिक से अधिक यही कहा जा सकता है कि कुछ विशेष समय और स्थानों पर प्रजातीयता की सांस्कृतिक अंतरों (भेदों) की सांस्कृतिक विशिष्ट अवधारणा अथवा यूं कहा जाए कि प्रजातीय भेदों की सांस्कृतिक विशिष्ट अवधारणा संजातीय सीमांकन के तरीकों में बहुत मजबूती से उभरकर आती है (उपर्युक्त 79)। बैन्टन (1967 : 10) ने प्रजाति और संजातीय समूह में मूल अंतर यह बताया कि संजातीय समूह की सदस्यता ऐच्छिक है और प्रजाति की ऐच्छिक नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि संजातीय समूह मिलाने (जोड़ने) का काम करता है जबकि प्रजातीय अलग करने अथवा बाहर निकालने से संबंधित हैं। हम एक बार फिर मूल वर्गीकरण "हम" बनाम "उन" पर आते हैं जो हमारी प्रजातीय और संजातीयता की समझ के लिए आवश्यक है, परंतु जेंकिन्स के विचारानुसार "संजातीयता समूह की पहचान करवाती है परंतु प्रजाति सामाजिक वर्गीकरण से संबंधित है।

माइकल ओमी एवं हावर्ड विनैन्ट अपनी पुस्तक "अमेरिका में प्रजातीय संगठन" (Racial formation in the U.S.A.) (1986) में यह विचार रखते हैं कि संजातीय समूह के विस्तृत क्षेत्र में प्रजाति को सम्मिलित करने से "पीड़ित को ही दोषी मानने की रणनीति" को बल मिलेगा। सोलोर्स इन विषय स्थितियों को कुल मिलाकर विचारोत्तेजक बात कहता है —

ओमी और विनैन्ट आंशिक तौर पर राजनीतिक आधार पर तर्क देते हैं कि किसी भी सही सामाजिक अवधारणा को ग्राह्य रूप में गलत राजनीतिक उद्देश्यों के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। यहाँ यह मानना जरूरी है कि जो विचारक प्रजाति और संजाति में पारिवारिक संबंध देखते है वे किसी पक्ष से प्रभावित हैं। ओमी और विनैन्ट के अंतिम बिंदु को ठीक ढंग से समझा गया है। गोर्डन्स के सिद्धांत कि "सभी प्रजातियां संजातीय समूह हैं" का गलत अर्थ निकाला जा सकता है। जैसे कोई सभी कालों को एक संजातीय समूह मानें क्योंकि वे भी एक प्रजाति के हैं। प्रजातियां संजातीयता की दृष्टि से अलग हो सकती

हैं और प्रायः होती भी हैं (अमरीका में अफ्रीकन, अमरीकी और नैमिकियन्स) ठीक वैसे ही जैसे संजातीय समूहों में प्रजातीय आधार पर भेद किया जा सकता है (हिजपैनिक्स-Hispenics – who may be of any race)। ओमी और विनैन्ट के अनुसार वे कुछ विशेष मामलों में समूह निर्माण के दृश्य और सांस्कृतिक तरीकों के संबंधों के सतर्क परीक्षण की आवश्यकता का समर्थन करते हैं परंतु इस बात से सहमत नहीं है कि प्रजाति और संजातीयता में पूरा दोहरापन है और उनमें एक गहरा विवाद है।

22.9 सारांश

पियर एल.वैन डेन बर्घे (Pierre L.Van den Berghe) ने प्रजाति और संजातीयता के बीच के अंतर की अच्छी प्रकार से व्याख्या की है। बर्घे की 1966 में लिखी चर्चित पुस्तक "प्रजाति और प्रजातीयता" में कहा गया है कि प्रजाति के संबंध में अनुमान लगाने के चार प्रमुख सिद्धांत भ्रम की स्थिति उत्पन्न करते हैं। शुरू में ही वह शारीरिक नृ-विज्ञान के आधार पर तीन चार प्रजातियों के निर्माण संबंधी विचार को इस आधार पर नकारता है कि यह पुरानी विधि अब उपयोगी नहीं है। प्रजाति का दूसरा अनुमान जिसे वह संजातीय समूह के शब्दों में प्रयोग करना बेहतर समझता है, वह है — जब हम "फांसीसी प्रजाति अथवा "यहूदी प्रजाति" इत्यादि कहते हैं। तीसरा वर्णन प्रजाति को एक प्रकार के जीवों का पर्याय बताता है। बर्घे द्वारा दिया गया चौथा गुणधर्म ही ऐसा है जिसे प्रयोग करने की वह सिफारिश करता है। उसके विचारानुसार —

"प्रजाति ऐसे मानव समूह को कहते हैं जो स्वयं अपने द्वारा अथवा अन्य समूहों द्वारा अपने स्वाभाविक और अपरिवर्तनीय शारीरिक गुणों के आधार पर अन्य समूहों से अलग समूह के रूप में परिभाषित किए जाते हैं।"

विद्यार्थियों के लिए यह नोट करना जरूरी है कि प्रजाति के संबंध में सामाजिक अवधारणाओं में गोर्डन द्वारा सुझाए गए दृश्य और शारीरिक गुणों अथवा बर्घे द्वारा वर्णित सांस्कृतिक गुणों से अलग स्वाभाविक और अपरिवर्तनीय गुणों पर विशेष ध्यान दिया गया है। इन विद्वानों का सबसे महत्वपूर्ण योगदान यह है कि प्रजातीय अथवा संजातीय अंतर शारीरिक और भाषायी दृष्टिकोणों का विषय है। अपने इस सोच को सिद्ध करने के लिए बर्घे कारण देता है —

व्यवहार में प्रजातीय और संजातीय समूह के बीच का अंतर कई कारणों से धुंधला जाता है। सांस्कृतिक गुणों को प्रायः आनुवंशिक और विरासत में मिला हुआ माना जाता है (दैहिक गंध जो कि खान-पान पर आधारित है, को सौंदर्य प्रसाधन एवं अन्य सांस्कृतिक ढंग से बदला जा सकता है) शारीरिक चिह्न अथवा दाग लगने-लगाने से, शल्य चिकित्सा और सौंदर्य प्रसाधनों से), और शारीरिक अंतरों की भावनात्मक धारणा पर प्रजाति की सांस्कृतिक धारणा का प्रभाव पड़ता है। एक अमीर नीग्रो एक उतने ही काले परंतु गरीब नीग्रो की तुलना में कम काला दिख सकता है — जैसा कि ब्राजील की कहावत है - "पैसा रंग साफ करता है" यद्यपि प्रजाति और संजातीयता में अंतर अनुभाविक दृष्टि से उपयोगी है।

सांस्कृतिक विषय अथवा विरासत के आधार पर अंतर करने की रट विरासत से जुड़े सांस्कृतिक मूल के विषय को नजरअंदाज करती है जिसके ऊपर सांस्कृतिक भेदों का निर्माण होता है तथा इसकी सीमाओं को परिभाषित और पुनर्भाषित किया जाता है। सोलोर्स इस विषय को यह कहकर निचोड़ निकालता है कि यह विषय प्रवृत्ति का है न कि निरपेक्ष भेद का। मेरी वाटर्स (1990) अपने विशिष्ट लेख "संजातीय विकल्प" में निम्नानुसार लिखता है —

कुछ वंशावलियों को सामाजिक शासनों में विरासत और वंश के नाम के आधार पर अन्य वंशों की तुलना में प्राथमिकता मिल जाती है। यदि कोई कुछ भाग अंग्रेज है और कुछ भाग जर्मन और स्वयं को जर्मन होने की पहचान देता है तो उस पर गैर अंग्रेज होने के प्रयास करने का आरोप नहीं लगेगा परंतु यदि कोई कुछ भाग अफ्रीकी है और कुछ भाग जर्मन है तो उसके स्वयं को जर्मन पहचान देने को शक की निगाह से देखा जाएगा और इसे प्रचलित सामाजिक मानदंडों के आधार पर स्वीकार नहीं किया जाएगा, यदि वह दिखने में काले रंग का हो।

किसी भी विचार का पक्ष लिए बिना हमारे लिए यह समझना महत्वपूर्ण है कि संजातीयता के निर्माण में शारीरिक गुणों और सांस्कृतिक समानताओं के आधार पर पहचान करना मूल कारक बन जाता है। पहचान के इस निर्माण एवं सीमाओं के निर्धारण को चिह्नित करने वाली सामाजिक प्रक्रियाएं किस प्रकार प्रचलित होती हैं, इसका वर्णन हम अगले पाठों में करेंगे।

22.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

एंथियाज, एफ. 1992, 'कन्नेकटिंग "रेस" एंड एथनिक फेनोमिना' *सोशियोलॉजी*, 26, पीपी 421-38.

बैंक्स (एम.), 1996, *एंथ्रोपॉलिजिकल कंस्ट्रक्शंस ऑफ एथनिसिटीः एन इंट्रोडक्टरी गाइड*, लंदनः रूटलेज।

बंटन (एम.), 1967. *रेस रिलेशंस*. लंदनः तविस्टॉक।

बर्थ, फ्रेडरिक, 1969 (एडी.), *एथनिक ग्रुप्स एंड बॉड्रीजः द सोशल आर्गेनाइजेशन ऑफ कल्चरल डिफ्रेंस*. लंदनःएलेन एंड अनविन।

बौमेन, जेड. 1990, *थिंकिंग सोशियालॉजिकली*, ऑक्सफोर्डः बेसिल ब्लैकवेल।

बेल, डेनियल 1975, "एथनिसिटी एंड सोशल चेंज"। इन नाथन ग्लाजर एंड डेनियल पी.मोइमिहान (एडी.), *एथनिसिटीः थ्योरी एंड एक्सपीरियेंस*। कैम्ब्रिज एट अलः हार्वड यूनिवर्सिटी प्रेस।

बर्ग, वान डेन पेरी (एल), 1981, *द एथनिक फेनोमिनन*, न्यूयार्कः एल्सेवर

ब्रास, पॉल 1985 (1974), *लॉग्वेज, रिलीजन एंड पॉलिटिक्स इन नार्थ इंडिया*, कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

ब्रोमले, यू. 1974 (एडी.), *सोवियत एथनोलॉजी एंड एंथ्रोपोलॉजी टुडे*। नीदरलैंड्स, द हॉगः माउटन एंड कं., एन.वी. पब्लिशर्स एट अल।

ब्रास, पॉल, 1991, *एथनिसिटी एंड नेशनलिज्मः थ्योरी एंड कम्पेरिजन*। न्यू दिल्ली एट एलः सेज पब्लिकेशंस।

कोहन, एब्नेर, 1974 (एडी), *टू डायमेंशनल मैनः एन एसे ऑन पॉवर एंड सिम्बोलिज्म इन कॉम्पलेक्स सोसायटी*। लंदनः रूटलेज एंड कीगन पॉल।

कोहन, रोनाल्ड 1978, एथनिसिटीः प्रोब्लम एंड फोकस इन एंथ्रोपोलॉजी "*एनुअल रिव्यू ऑफ एंथ्रोपोलॉजी*। वाल्यूम 7, पीपी 379-404.

गीर्टज, क्लिफोर्ड। 1973, *द इंटरप्रेटेशन ऑफ कल्चर*। न्यूयार्कः बेसिक बुक्स

ग्लेजर, डेनियल 1958, डायनामिक्स ऑफ एथनिटिक आइडेंटिफिकेशन" इन *अमेरिकन सोशियोलॉजिकल रिव्यू*, 23 (1958), 31-40.

ग्लेजर, नाथन एंड माईमिहाँ, डेनियल पी. 1978 (1975), *एथनिसिटीः थ्योरी एंड एक्सपीरियंस*। कैम्ब्रिजः एट एलः हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ग्लेसन, फिलिम, 1980, "अमेरिकल ऑलः एथनिसिटी, आइडियोलॉजी एंड अमेरिकन आडेंटिटी इन द एरा ऑफ वर्ल्ड वार II", *हार्वर्ड एनसाइक्लोपीडिया ऑफ अमेरिकन एथनिक ग्रुप्स* (एडी), स्टीफन ए. थर्न्सट्राम, ऑस्कर हैंडलिन एंड अन्न ऑरलोव. यूएसए।

हैंडलिन ऑस्कर, 1952, *द अपरूटेडः द इपिक स्टोरी आफ द ग्रेटी माइग्रेशनंस दैट मेड द अमेरिकन पीपल*। न्यूयार्कः ग्रूसेट एंड डनलप।

हिर्चफील्ड, मग्नू, 1938, *रेसिज्म। ट्रांसलेटेड एंड एडिटेड दन एडेन एंड केडर पॉल*, लंदनः विक्टर गोलेंज।

जेंकिंस, रिचर्ड, 1977, *रिथिंकिंग एथनिसिटीः अर्ग्यूमेंटस एंड एक्सप्लोरेशंस*। सेज पब्लिकेशंस।

मेर्टन, रॉबर्ट के. 1972, "इनसाइडर्स एंड आउटसाइडर्स" इन *द अमेरिकन जर्नल ऑफ सोसियोलॉजी*, 78 (1) (जुलाई 1972), पीपी 9-47.

ओमी, मिखाइल एंड हॉवर्ड विनंट 1989 (1986), *रेसियल फार्मेशन इन द यूनाइटेड स्टेट्सः* फ्रॉम द 1960 टु द 1980. न्यूयार्कः रूटलेज।

ऑस्टरगार्ड, यू 1992, "पीजेंट्स एंड डेंसः द डानिश नेशनल आइडेंटिटी एंड पॉलिटिकल कल्चर"। *कम्परेटिव स्टडीज इन सोसायटी एंड हिस्ट्री*, 34, 3-27.

शॉ, आर.पी. एंड वोंग, वाई 1989, *जेनेटिक सीड्स ऑफ वारफेयर*। बोस्टनःअनविन एंड ह्यूमैन।

सोलॉर्स, वार्नर (एडी.) 1996. *थ्योरीज ऑफ एथनिसिटीः ए क्लासिकल रीडर*. हॉंडमिल्स आइटलः मैकमिलन प्रेस लि.

सोलॉर्स, वार्नर (एडी.) 1981. "थ्योरीज ऑफ अमेरिकन एथनिसिटीः *अमेरिकन क्वाटरली*, 33(3, पीपी 257-83.

स्टोन, जॉन, 1996 "एथनिसिटी"। इन एडम कूपर एंड जेसिका कूपर (एडी.), *द सोशल साइंस इनसाइक्लोपीडिया*। लंदन एंड न्यूयार्कःरूटलेज (सेकंड एडीसन)।

वर्मूलेन, हंस एंड ग्रोवर्स, कोरा, 1994, (एडी), *द एंथ्रोपोलॉजी आफ एथनिसिटीः बियोंड 'एथनिक ग्रुप्स एंड बौंड्रीज'* ऐम्सटरडेमः हेट स्पिनही।

वालम, संद्रा 1986, "एथनिसिटी एंड द बौंड्री प्रोसेस इन कॉटेक्स्ट", इन जॉन जेक्स एंड डेविड मेशन (एडी.), *थ्योरीज ऑफ रेस एंड एथनिक रिलेशंस*। कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

वाटर्स, मेरी सी. 1990, *एथनिक ऑप्संसः चूजिंग आइडेंटिटीज इन अमेरिका*। बर्कलेः यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

वेबर, मैक्स 1968 (1922) *इकोनॉमी एंड सोसायटीः एन ऑउटलाइन ऑफ इंटरप्रियेटिव सोसियोलॉजी*, 3 वाल्यू., गौंथेर रॉथ एंड क्लाउज विच, (एडी.) न्यूयार्कः बेडमिनिस्टर प्रेस।